International Journal of Jyotish Research
(वेदचक्षु)

ISSN: 2456-4427
Impact Factor: RJIF: 5.11
Jyotish 2021; 6(2): 17-21
© 2021 Jyotish
www.jyotishajournal.com
Received: 07-05-2021
Accepted: 15-06-2021

डॉ. नन्दन कुमार तिवारी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, ज्योतिष विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल, उत्तराखंड, भारत

Corresponding Author:
डॉ. नन्दन कुमार तिवारी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, ज्योतिष विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल, उत्तराखंड, भारत

ज्योतिषशास्त्रोक्त सूर्यादिग्रहजनित रोग विमर्श

डॉ. नन्दन कुमार तिवारी

प्रस्तावना

ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्त्तकों (ऋषियों) द्वारा यह स्पष्ट प्रतिपादित है कि सम्पूर्ण ज्योतिष का मूलाधार है- सूर्यादिग्रह। ज्योतिष शास्त्र का क्रियात्मक पक्ष इन्हीं ग्रहों पर आधारित है। सूर्यादि ग्रह से तात्पर्य है- सूर्य एवं चन्द्र (प्रधान ग्रह) मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, एवं शनि (पंचताराग्रह) तथा राहु एवं केतु (तमोग्रह)। ''राजा रवि: शशिधरश्च बुध: कुमार:'' के आधार पर ग्रहों का राजा सूर्य एवं चन्द्रमा को कहा गया है। सूर्य ग्रह की प्रधान रश्मियाँ (सुषुम्ना, हरिकेश, विश्वकर्मा, विश्वव्यचा, संयदवसु, अर्वावसु, स्वराड आदि) भू-तत्व, जल-तत्व, अग्नि-तत्व, आकाश-तत्व एवं वायु तत्व की संवाहिका होने के कारण सृष्टि निर्माण व संचालन में प्रतिनिधित्व करती हैं। इसी प्रकार सूर्यादि समस्त ग्रह भूमण्डल तथा उस पर रहने वाले समस्त चराचर प्राणियों को काल सापेक्ष निरन्तर अपने- अपने प्रभावों से प्रभावित करते रहते हैं।

जब हम शरीर के केवल सुख और दु:ख का विचार करते हैं तो सर्वप्रथम मनुष्य की आयु तथा स्वास्थ्य का प्रश्न सामने आता है। इस सम्बन्ध में 'पंचस्वरा' नामक ग्रन्थ में कहा भी है कि-

''पूर्वमायु: परीक्ष्येत ततो लक्षणमादिशेत्।''

अर्थात् जब मनुष्य का जीवन रहेगा तभी वह अपने शारीरिक सुखों एवं दु:खों का उपयोग करेगा। ''शरीरं व्याधि मन्दिरम्'' यह उक्ति स्पष्ट दर्शाती है कि रोगों का स्थान शरीर ही है एवं रोग शरीर नष्ट होने के पश्चात् भी जीव का साथ नहीं छोड़ती है। ये अन्य जन्मों में भी शारीरिक कष्ट देते रहती हैं। जैसा कि आचार्य वराहमिहिर जी ने लघुजातक में पूर्वजन्म के कर्मानुसार ही मनुष्य का जन्म, उसकी प्रवृतियाँ तथा उसके भाग्य का निर्माण होना बतलाया है। यथा-

यदुपचितमन्यजन्मनि शुभाऽशुभं तस्य कर्मण: प्राप्तिम्।
व्यञ्जयति शास्त्रमेतत् तमसि द्रव्याणि दीप इव।।१

साथ ही आचार्यों का यह भी कथन है कि ''कर्मजा व्याधय: केचित् दोषजा: सन्ति चापरे'' अर्थात् कुछ व्याधियाँ कर्मों के कारण होती है तथा कुछ मानव शरीर में व्याप्त प्रकृतित्रय (कफ, पित्त एवं वात) का असंतुलन से। इसी प्रकार ''पूर्वजन्मकृतं पापं व्याधिरूपेण जायते'' यह उक्ति भी उक्त तथ्य की पुष्टि करती है। प्रमुखता के दृष्टिकोण से रोग तीन प्रकार के होते हैं- साध्य, असाध्य एवं याप्य। इनमें असाध्य रोग प्राय: कर्मज होते हैं। साध्य व्याधियाँ प्राय: दोषज होती हैं। याप्य व्याधियों में प्राय: दोनों की संभावना होती है। असाध्य रोगों की की प्राय: दो अवस्थायें होती है- 1. गर्भस्थ विकृतिजन्य 2. प्रसवोत्तर विकृतिजन्य।

1. गर्भस्थ विकृतिजन्य- गर्भस्थ शिशु के विकास में अवरोध उत्पन्न कर विभिन्न अवयवों में विकार उत्पन्न होना, अंगहीनता, अधिकांग, विकलांग आदि स्थितियाँ प्राय: असाध्य होती हैं। इनके ज्ञान के लिए ज्योतिषशास्त्र में आधानकाल के आधार पर ग्रहों की स्थितियों का अवलोकन करने का विधान है। गर्भ के मासानुसार विकास क्रम तथा प्रत्येक मासों के अधिपति ग्रह पूर्व निर्दिष्ट हैं-

कललघनावयवास्थित्वगरोमस्मृतिसमुद्भवा: क्रमश:।
मासेषु शुक्रकुजजीवसूर्यचन्द्रार्किसौम्यानाम्।। २

प्रत्येक मासों के अधिपति ग्रहों के अनुसार गर्भस्थ शिशु के विकासक्रम का तथा अवरोध या विकृति का ज्ञान किया जाता है। ग्रहों के प्रभाव से प्रसवकाल से पूर्व गर्भपात अथवा समय से पूर्व प्रसव का ज्ञान भी सम्भव होता है।

2. प्रसवोत्तर व्याधि- कभी-कभी प्रसव के अनन्तर किसी व्याधि के परिणामस्वरूप अथवा किसी घटना के फलस्वरूप अंग-क्षतिग्रस्त हो जाते हैं जिनमें कुछ की चिकित्सा सम्भव हो पाती है तथा कुछ की चिकित्सा असंभव होने के कारण असाध्य हो जाती है। इस प्रकार के रोगों के पूर्वज्ञान का स्रोत एकमात्र ज्योतिषशास्त्र है।

ज्योतिषशास्त्रोक्त सूर्यादि ग्रह कालानुरोधेन मानव शरीर में उत्पन्न रोग के कारक बनते हैं। अब यहाँ सूर्यादिग्रह जनित रोगों का विश्लेषण करते हैं। सर्वप्रथम 'प्रश्नमार्ग' नामक ग्रन्थ में उद्धृत सूर्यादिग्रह से उत्पन्न रोगों का उल्लेख करते हैं-

अत्यग्निं वेदनामन्तर्ज्वरं चार्कोऽथ चन्द्रमा:।
छर्दिमूर्ध्वानने तिर्यग्वक्त्रे मूत्रादिबन्धनम्।।
अतिसारं तृषं चाधोवक्त्रे शोफन्तु सर्वग:।
उष्णप्रसरणं दाहं रक्तक्षोभभवं व्रणम्।।
भूमिजोऽथ बुध: कुर्याच्छीतज्वरमतिभ्रमौ।
सन्निपातरूजञ्चाथ गुरूर्बुद्धैरनार्जवम्।।
अजीर्ति श्वयथुञ्चाथ दाहं मोहं च भार्गव:।
तृष्णारूचिसमस्ताङ्गतोदांस्तरणिनन्दन:।।
वायुक्षोभमहिमान्दिर्हिक्कामपि सिरोद्भवम्।
सूर्यादिगुलिकान्तानामिमे रोगा: प्रकीर्तिता:।।३

उक्त श्लोक में सूर्यादि नवग्रहों के कारण उत्पन्न रोगों का वर्णन किया गया है। यहाँ क्रमश: उसका लेखन करते हैं-

1. सूर्य- शरीर या भीतरी अंगों में तीव्र जलन, पीड़ा तथा अन्तर्ज्वर (भीतर ही भीतर मन्द बुखार) उत्पन्न करता है।
2. चन्द्रमा- चन्द्रमा यदि उर्ध्वमुख राशियों में स्थित हो तो वमन होता है। सूर्य द्वारा छोड़ी हुई राशि = सूर्य द्वारा भोगी जा चुकी राशि को उर्ध्वमुख कहा जाता है। यदि चन्द्रमा तिर्यङ्मुख राशि में हो तो मूत्रकृच्छ्र (पेशाब में जलन) आदि उत्पन्न करता है। सूर्य जिस राशि में हो उससे दूसरी राशि तिर्यङ्मुख होती है।
   यदि चन्द्रमा अधोमुख राशि में हो तो अतिसार, प्यास आदि उत्पन्न करता है। सूर्य स्थित राशि को अधोमुख कहते हैं। यह स्थिति अमावस्या के समीप होती है। शेष नौ राशियों में चन्द्रमा हो तो शोफ (Dropsy) उत्पन्न करता है।
3. मंगल- शरीर में जलन, उष्णता, रक्तप्रकोप, रक्तपित्त, रक्तस्राव तथा घाव करता है।
4. बुध- शीतज्वर, मतिभ्रम (मानसिक रोग) आदि बौद्धिक रोग उत्पन्न करता है।
5. गुरू-गुरू के कारण सन्निपात त्रिदोष जन्य विकार, बुद्धि में मन्दता या कुटिलता, अजीर्ण तथा श्वयथु (सूजन) उत्पन्न होती है।
6. शुक्र-अजीर्ण जलन, मूर्च्छा तथा प्रमेहादि रोग पैदा करता है।
7. शनि प्यास, अरूचि तथा वातजन्य पीड़ा करता है।
8. राहु वायुविकार, उत्तेजना आदि पैदा करता है।
9. गुलिक मान्दि हिचकी तथा सिटाकुटिलता (नसों का टेढ़ापन) उत्पन्न करता है अथवा तंत्रिका के रोग पैदा करता है।

सूर्यादि ग्रहों का शरीर के विभिन्न अंगों पर अधिकार-

सूर्यादीनां कुक्षिहृन्मूर्धवक्षांस्यूरू वक्त्रं जानुनी चाङ्घ्रियुग्मम्।
अङ्गानि स्युर्व्याधयोऽङ्गे ग्रहाणां वक्तव्या
दौर्बल्यदौस्थ्यादिभाजाम्।।

तालिका 1: ग्रहों के शरीराङ्गों पर प्रभाव चक्र –

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु
शरीर के अंग	कुक्षि (पेट) Stomach & Abdomen	हृदय Heart	मूर्धा (शिर) Head	वक्ष (छाती) Chest	(कमर से घुटनों तक) ऊरू Thighs	वक्त्र (मुख) Face & Mouth	जानु (दोनों घुटने) Knees	अङ्घ्रि (दोनों पैर) Feet

चक्र से स्पष्ट है कि सूर्यादि ग्रहों का क्रमश: शरीर के 1. कुक्षि, 2. हृदय, 3. मूर्धा (शिर) 4. वक्ष (छाती) 5. ऊरू (कमर से घुटने तक का भाग), 6. वक्त्र (मुख) 7. जानु (घुटने) 8. अंघ्रिद्वय (दोनों पैर) इन अंगों पर अधिकार होता है।

ग्रहाणां वातादिदोषा: -

पित्तं वायुयुतं करोति दिनकृद्वातं कफं शीतगु:।
पित्तं भूमिसुतस्तथा शशिसुतो वातं च पित्तं कफम्।।
जीवो वातकफौ सिताऽनिलकफौ वातं च पित्तं शनि:।
क्षीणेन्दु: स्थिरराशिनाथकथितं पूर्ण: कफं तोयभे।। ४

अर्थात् सूर्य ग्रह से वात+पित्त विकार, चन्द्रमा से वात+कफजन्य रोग, मंगल से पैत्तिक रोग, बुध से त्रिदोषज (वात+पित्त+कफ) रोग, गुरू से वात+कफ (द्विदोषज) विकार, शुक्र से वात+कफ (द्विदोषज) रोग तथा शनि से वात+पित्त जन्य विकार उत्पन्न होते हैं। क्षीण चन्द्र जिस राशि में बैठता है उसके स्वामी के अनुसार रोग करता है। पूर्ण चन्द्र जलराशि में कफरोग करता है। सारसंग्रह के इस मतानुसार केवल मंगल से एकदोषज रोग होता है, बुध से त्रिदोषज तथा शेष ग्रहों से द्विदोषज रोग उत्पन्न होते हैं।

ग्रहाणां वातादिदोषा: -

पित्तं वायुयुतं करोति दिनकृद्वातं कफं शीतगु:।
पित्तं भूमिसुतस्तथा शशिसुतो वातं च पित्तं कफम्।।
जीवो वातकफौ सिताऽनिलकफौ वातं च पित्तं शनि:।
क्षीणेन्दु: स्थिरराशिनाथकथितं पूर्ण: कफं तोयभे।। ४

अर्थात् कुण्डली के दु:स्थान (६,८,१२) स्थानों में स्थित सूर्य एवं मंगल पित्तजन्य रोग उत्पन्न करते हैं। यदि उक्त स्थानों में शुक्र तथा चन्द्रमा बैठे हों तो शरीर में जल तत्व की वृद्धि से होने वाले रोग उत्पन्न होते हैं। शनि की दु:स्थान स्थिति से वातविकार, बुध की स्थिति से त्रिदोषज रोग तथा गुरु के अनिष्ट स्थानों में होने पर आकाश तत्व की विकृति से बाधिर्य आदि व्याधियाँ होती हैं। अनिष्ट स्थानों में बैठे ग्रह अपने-अपने रोगों को अपनी-अपनी ऋतुओं में उत्पन्न करते हैं।

ऋतु नाम	स्वामी ग्रह
वसन्त	शुक्र
ग्रीष्म	सूर्य-मंगल
वर्षा	चन्द्रमा
शरद्	बुध
हेमन्त	गुरु
शिशिर	शनि

इस प्रकार ऋतुजन्य रोगों में भी ग्रहों की भूमिका होती है।

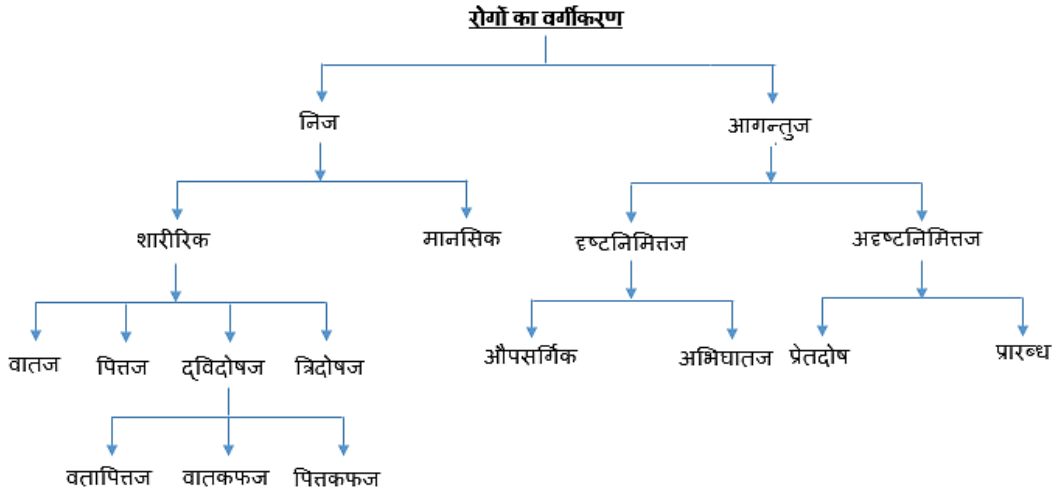

'प्रश्नमार्ग' नामक ग्रन्थानुसार निज तथा आगन्तुज भेद से रोग दो प्रकार के होते हैं, फिर इन दोनों में से प्रत्येक के दो-दो भेद होते हैं। उपर के क्षेत्र द्वारा रोगों का वर्गीकरण स्पष्ट है। इसका मूल श्लोक भी ग्रन्थ में इस प्रकार है -

सन्ति प्रकारभेदाश्च रोगभेदनिरूपणे।
ते चाप्यत्र विलिख्यन्ते यथा शास्त्रान्तरोदिता:।।
रोगास्तु द्विविधा ज्ञेया निजागन्तुविभेदत:।
निजाश्चागन्तुकाश्चापि प्रत्येकं द्विविधा: पुन:।।
निजा शरीरचित्तोत्था दृष्टादृष्टनिमित्तजा:।
तथैवागन्तुकाश्चैवं व्याधय: स्युश्चतुर्विधा:।। ६

शारीरिक रोग- त्रिदोष (वात, कफ, पित्त) के मिश्रण से जो रोग उत्पन्न होते हैं, उन्हें शारीरिक रोग कहा जाता है। शारीरिक रोगों का विचार कुण्डली में अष्टमेश, अष्टम भाव, अष्टम भावद्रष्टा ग्रह तथा अष्टमस्थ ग्रह से होता है। इनमें जो बली ग्रह होता है वह अपना रोग उत्पन्न करता है।

मानसिक रोग- क्रोध, भय एवं शोकादि मानसिक वेगों को धारण करने से मानसिक रोग होते हैं। इन मनोरोगों का विचार अष्टमेश तथा चतुर्थेश की युति एवं दृष्टिसम्बन्धि से विचार करना चाहिए।

दृष्टनिमित्तजरोग- दूसरे के द्वारा दिया गया शाप, अभिचार कर्म, अभिघात आदि से होने वाले रोग दृष्टनिमित्तज होते हैं। इस प्रकार के रोगों का विचार कुण्डली में षष्ठेश, षष्ठ भाव, षष्ठद्रष्टा, षष्ठारूढ ग्रह इन चारों से करना चाहिए।

अदृष्टनिमित्तजरोग- पूर्व में कथित जो दृष्ठनिमित्तजरोग हैं, उनमें यदि षष्ठेश तथा अष्टमेश का सम्बन्ध हो तो वे रोग उग्र हो जाया करते हैं। जो अदृष्टनिमित्तजरोग हैं वे बाधक ग्रहों के कारण उत्पन्न

होते हैं। वे पूर्व जन्म के प्रारब्ध से हुआ करते हैं। इनमें रोग का कारण पता नहीं चल पाता।

सूर्य ग्रह जनित रोग-

पित्तोष्णज्वरतापदेहपतनामयस्मरहृत्कोडज।
व्याधीन् वक्ति रविहृदार्त्यरिभयं त्वग्दोषमस्थिस्रवम्।।
कुष्ठाग्न्यस्रविषार्तिदारतनयव्यापच्चतुष्पाद् भयम्।
चौरक्ष्मापतिदेवफणिभृत्भूतेशभूताद्भयम्।। ७

अर्थात् रोगकारक सूर्य बलशाली हो तो शरीर में पित्त, उष्णता, ज्वर, दाह, मूर्छा अपस्मार (मिर्गी), हृदयरोग, वस्तिरोग, नेत्ररोग, चर्मरोग, अस्थिभंग, कुष्ठरोग तथा अग्नि, शस्त्र, विष, पुश, सर्प, चोर, नृप एवं भूत प्रेतादि का भय होता है।

चन्द्रजनितरोग-

निद्रालस्यकफातिसारपिटका: शीतज्वरं चन्द्रमा:।
श्रृंग्याब्जाहतिमग्निमान्द्यकृशता योषिद्व्यथाकामिला:।।
चेतश्शांतिमसृग्विकारमुदकाद्भीतिं च बालग्रहात्।
दुर्गाकिन्नरधर्मदैवफणभृद्याक्षाच्च पीड़ां वदेत्।। ८

यदि रोगकारक चन्द्रमा बलशाली हो तो निद्रा की अधिकता, आलस्य की अधिकता, कफजन्य रोग (खॉसी, श्वास, जुकाम, निमोनियाँ आदि) अतिसार, व्रण, शीतज्वर (मलेरिया बुखार) सींगवाले पशुओं से कष्ट, जलचर प्राणियों से कष्ट, अग्निमांद्य, कृशता, मानसिक अशान्ति, रक्तविकार, आयरन की कमी, दुर्गादि देवियों द्वारा उत्पन्न रोग, किन्नरों एवं यक्षों से कष्ट, सर्पों से भय, धर्मजन्य तथा दैवजन्य आदि रोग उत्पन्न होते हैं।

मंगलजनितरोग-

तृष्णासृक्कोपत्तिज्वरमनलविषास्रार्तिकुष्ठाक्षिरोगान्।
गुल्मापस्मारमज्जाविहतिपरुषतापामिकादेहभंगान्।।
भूपारिस्तेनपीडासहजसुतसुहृद्वैरयुद्धं विधत्ते।
रक्षोगन्धर्वघोरग्रहभयमनवनीसूनुरूर्ध्वांगरोगाम्।। ९

मंगल ग्रह से तृष्णा, असृक्कोप (रक्तप्रकोप, नाक-मुखादि से खून गिरना), पित्तज्वर, अनलपीड़ा (अग्नि, बिजली आदि से होने वाली पीड़ा), विषपीड़ा, कुष्ठ रोग, अक्षिरोग, गुल्म (पेटगैस, बायगोला तथा ट्यूमर आदि), अपस्मार, देहभंग, भूप, शत्रुजन्य पीड़ा, दुष्टात्माओं से पीड़ा, पामिका (खुजली, एक्जिमा आदि) आदि रोग उत्पन्न होता है।

बुधजनितरोग-

भ्रांतिं दुर्वचनं दृगामयगलघ्राणोत्थरोगान् ज्वरं
पित्तश्लेष्मेसमीरजं विषमपि त्वग्दोषपाडवामयान्।
दुस्स्वप्नं च विचर्चिकां निपतनं पारुष्यबन्धश्रमान्।
गन्धर्वक्षितिहर्म्यवासिमयुभिर्ज्ञो वक्ति पीड़ां खगै:।।१०

रोगकारक बुध यदि बलशाली हो तो सभी प्रकार के मनोरोग, दुर्वचन, दृगामय, ज्वर, विषजन्य रोग, त्वचा रोग, पाण्डु रोग, दु:स्वप्न, निपतनम्, श्रम, पक्षी पीड़ा आदि रोग उत्पन्न होता है।

गुरुजनितरोग-

गुल्मान्त्रज्वरशोकमोहकफजश्रोतार्तिमोहामयान्।
देवस्थाननिधिप्रपीडनमहीदेवेशशापोद्भवम्।।
रोगं किन्नरयक्षदेवफणभृद्विद्याधराद्युद्भवं।
जीव: सूचयति स्वयं बुधगुरु कृष्णापचारोद्भवम्।। ११

देवगुरु वृहस्पति यदि रोगकारक होकर बलशाली हो तो गुल्म, आन्त्रज्वर, मोह, कफरोग, कानों की बीमारियाँ, प्रमेह, ब्राह्मण के शाप द्वारा उत्पन्न रोग, विद्याधरों के प्रकोप से उत्पन्न रोग एवं नारायण प्रदत्त रोगादि उत्पन्न होते हैं।

शुक्र ग्रह जनितरोग-

पाण्डुश्लेष्मेमरुत्प्रकोपनयनव्यापत्तितन्द्रश्रमान्।
गुह्यास्यामयमूत्रकृच्छ्रमदनव्यापत्तिशुक्लस्रुती:।।
वासस्त्रीकृष्ज्ञिदेहकान्तिविहतिं शोफामयं योगिनी।
यक्षीमातृगणाद्भयं प्रियसुहृद्भङ्गं सित: सञ्चयेत्।। १२

रोगकारक ग्रह शुक्र यदि बलवान हो तो पाण्डुरोग, श्लेष्मरोग, वातरोग, नेत्ररोग, तन्त्रा, गुप्तरोग, मूत्रकृच्छ्र रोग, कामरोग, एलर्जी, मातृगण प्रकोप से उत्पन्न कष्ट, मित्र बिछोह जन्य कष्ट आदि रोग उत्पन्न होते हैं।

शनि ग्रह जनितरोग-

वातश्लेष्मविकारपादविहतीरापत्तितन्दीश्रमान्
भ्रान्तिं कुक्षिरुगान्तरुष्णभृतकध्वंसं च पश्वाहितम्।
भार्यापुत्रविपत्तिमंगविहितं हृतापमर्कात्मजो
वृक्षाश्मक्षतिमाह कश्मलगणै: पीडां पिशाचादिभि:।।१३

शनि से वातश्लेष्म विकार, पादविहती, तन्त्री, श्रम, भ्रांति, कुक्षिरूक, अन्तरूष्ण, पश्वाहति, पुत्रविपत्ति, अंगविहति, अश्मक्षति तथा पिशाचादि पीड़ा उत्पन्न होता हैं।

राहुकेतुगुलिकजन्यरोग-

स्वर्भानुस्तनुतापकुष्ठविषमव्याधीन विषं कृत्रिमं
पादातिं च पिशाचपन्नगभयं भार्यातनूजापदम्।।
ब्रह्मक्षत्रविरोधशत्रुजभयं केतुस्तु संसूचयेत्।
प्रेतोत्थं च गदं विषं च गुलिक: सर्पार्त्तिमाशौचकम्।।१४

इसी प्रकार राहु एवं केतु ग्रह के कारण शरीरताप, कुष्ठ रोग, असाध्य एवं रहस्यात्मक रोग, विषम विकार, पैरों में कष्ट, सर्प आदि से कष्ट, अकारण भय, स्त्री तथा पुत्रों पर आकस्मिक विपत्तियाँ राहु से तथा केतु के कारण ब्राह्मण एवं क्षत्रिय से विरोध, शत्रुओं से भय, प्रेतबाधा तथा विषभय आदि व्याधियाँ उत्पन्न होती है।

सन्दर्भ

१. लघुजातक- प्रथम अध्याय, श्लोक संख्या- ३
२. लघुजातक- आधानाध्याय, श्लोक संख्या- ६
३. प्रश्नमार्ग- एकादश अध्याय, श्लोक संख्या- २१-२५
४. प्रश्नमार्ग- एकादश अध्याय, श्लोक सख्या- ११
५. प्रश्नमार्ग- द्वादश अध्याय, श्लोक संख्या- १३-१४
६. प्रश्नमार्ग- द्वादश अध्याय, श्लोक संख्या- १७-१९
७. ७-१४ प्रश्नमार्ग- द्वादश अध्याय, श्लोक संख्या- ६७-७४